विषय प्रवर्तन

भारतीय राष्ट्र राज्य और भारतीयों के लिए आज सांप्रदायिकता एक विकट समस्या बन गई है। सांप्रदायिकता हमारी उस एकजुटता और एकता को खंडित करने की हालत में आती जा रही है जो हमने बहुत धैर्य और मेहनत से अर्जित की है। इसके उदाहरण हम गुजरात मुंबई, बंगलौर, जबलपुर, मेरठ, मुरादाबाद, पंजाब, दिल्ली और अभी-अभी हाल में मुजफ्फरपुर शामली एवं सहारनपुर जातिय दंगों में देख सकते हैं। चूंकि, सांप्रदायिकता कोई स्थानीय या एक इलाके विशेष की समस्या नहीं है, इसलिए दक्षिणपंथी राजनीतिक पार्टियों को जैसे-जैसे मतदाताओं के विश्वास मिलते जा रहे हैं। उदाहरण के तौर पर राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ आदि जैसे कई अग्रणी संगठन जैसे-जैसे राजनीति और समाज की मुख्यधारा में आते जा रहे हैं वैसे-वैसे देश में सांप्रदायिक शक्तियां अपना विस्तार पा रही हैं। कहना गलत न होगा कि सांप्रदायिक शक्तियां यदि सत्ता का हिस्सा बन जाती हैं तो सांप्रदायिकता और सांप्रदायिक दंगों को एक देशव्यापी घटना बन जाने में किसी को किसी प्रकार का कोई संदेह नहीं होना चाहिए। कभी यहां तो कभी वहां, कहीं कम तो कही ज्यादा। परंतु, पूरे देश में सांप्रदायिकता का चेहरा हमारी ही हर जमीन से उगता रहता है, इतना तो निश्चयत: तय है।

1 प्रस्तावना

धर्मनिरपेक्षता और सांप्रदायिकता की परिभाषा को देखें तो धर्मनिरपेक्षता का अभिप्राय है- राज्य राजनीति और गैर-धार्मिक मामलों से धर्म को बिल्कुल अलग रखा जाए और उसे एक सर्वथा निजी मामला माना जाए। और, फिर भारत में अनेक धर्मावलंबी निवास करते हैं। इसी से भारतीय धर्मनिरपेक्षता में कई अद्भुत मौलिक आयाम भी जुड़ते हैं। इसलिए हमारी संप्रभु सरकार को किसी धर्म रहित, धर्मनिरपेक्ष और सब धर्मों के लिए निस्संग भाव और नीति इमानदारीपूर्वक रखनी चाहिए। इस आलोक में निस्संगता का नीति-निर्देशक संवैधानिक अर्थ यह भी है कि सभी धर्मों को, यहां तक कि नास्तिक को भी समान अवसर दिए जाएं तथा धर्म या जाति के नाम पर कोई भेदभाव न हो। दरअसल धर्मनिरपेक्षता धर्म का विरोध नहीं करती है। देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरु के शब्दों में "धर्मनिरपेक्षता का अर्थ धर्म को हतोत्साहित करना नहीं है। यह धर्म और चेतना की आजादी की नीति है और इसमें वे भी शामिल हैं जिनका किसी धर्म में कोई विश्वास नहीं है। धर्मनिरपेक्षता का मतलब है सभी धर्मों को आचरण और विकास का तब तक समान अवसर मिलना जब तक कि वे आपस में या राज्य की मूलधारणा से नहीं टकराते हैं।

विवेचनार्थ, भारतीय धर्मनिरपेक्षता में एक और मौलिकता है, एक और विशिष्टता है। उल्लेखनीय है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता लगभग 19वीं सदी के अंत में उपनिवेशवाद से आजादी की लड़ाई के अस्त

के तौर पर प्रकट और प्रकाशित हुई थी। यह आजादी की विचारधारा भी, उपनिवेशवादी शासकों ने शुरू से ही और वर्ष 1858 के बाद से तो और ज्यादा भारत के लोगों को जाति, भाषा, धर्म और इलाकों के आधार पर बाँटने की कोशिश की। कहना गलत न होगा कि बीसवीं सदी की शुरुआत तक तो सांप्रदायिकता भारतीय स्वतन्त्रता की लड़ाई के खिलाफ बड़ी चेतावनी बन गयी थी और अंग्रेज उसके सबसे बड़े पोषक थे। इसी चुनौती और चेतावनी को पहचान कर उससे जूझने के लिए भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में 19वीं सदी के अंत से ही धर्मनिरपेक्षता को दृढ़तापूर्वक अपनाया गया और उसका प्रचार-प्रसार किया गया। इसलिए भारत में धर्मनिरपेक्षता का पहला अर्थ ही सांप्रदायिकता का निषेध हो गया और वही आज का वास्तविक सच है।

अगर सांप्रदायिकता की मूल अवधारणा की बात की जाय तो सांप्रदायिकता का आधार ही यह धारणा है कि भारतीय समाज कई ऐसे संप्रदायों में बंटा हुआ है जिनका हित न सिर्फ अलग-अलग हैं, बल्कि एक-दूसरे के विरोधी भी हैं, जैसा कि सुप्रसिद्ध इतिहासकार बिपिनचंद्रा भी स्वीकार करते हैं। इतना ही नहीं, सांप्रदायिकता के जन्म के पीछे एक विश्वास यह भी माना जाता है कि राजनीतिक और आर्थिक से लेकर सामाजिक और सांस्कृतिक इरादों के लिए लोगों को सिर्फ धर्म की रस्सी से ही बंधकर आंका जा सकता है।

"सांप्रदायिकता एक विचारधारा और सिद्धांत भी है। सिद्धांत से तात्पर्य एक ऐसे विश्वासतंत्र या एक-दूसरे पर टिकी हुई धारणाओं का ऐसा जाल है जिसके चश्में से समाज और समाजनीति को देखा और परखा जाता है। वैसे तो सांप्रदायिकता और सांप्रदायिक हिंसा एक ही चीज नहीं हैं।"[01] लेकिन यह सही है कि सांप्रदायिक विचारधारा कई मामलों में सांप्रदायिक हिंसा का कारण अवश्य बन जाती है। इस तरह सांप्रदायिकता प्राथमिक कारण है तथा हिंसा उसका नतीजा है। दंगें, लूट, हत्या और सांप्रदायिक हिंसा के दूसरे तरीके दरअसल सांप्रदायिक सोच के बिगड़े हुए और विकृत रूप होने के वाबजूद उसके स्वाभाविक परिणाम हैं। सांप्रदायिक दंगा या आकास्मिक आक्रोश का सुनिश्चित नरसंहार उसकी अमानवीयता, क्रूरता, विद्वेष और बर्बरता और बहुत सारी लाशें और बहुत सी उजाड़ बस्तियाँ तुरंत शीर्षक बन जाती हैं और हमें मजबूर करती हैं कि हम इस पर गंभीरता से सोचें, ध्यान दें। मगर यह असल में पहले से फैलायी जा रही सांप्रदायिक विचारधारा और उसके आधार पर प्रभावित हुए लोगों के दिमाग से सांप्रदायिक विश्वास-तंत्र के मौजूद जहर का एक प्रकट फल है। हमें यहां यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि सांप्रदायिक विचारधारा बिना हिंसा के भी पनप सकती है, लेकिन सांप्रदायिक हिंसा बिना सांप्रदायिक विचारधारा के प्रचार और प्रसार के घटित नहीं हो सकती है।और, सांप्रदायिक हिंसा सांप्रदायिक विचारधारा के पनपने और प्रचारित होने के लिए ज्वलनशील ईंधन का काम करती है और यही वजह है कि सांप्रदायिक लोग इसका भरपूर सहारा लेते हैं।

"भारत जैसे बहुलतावादी देश में सांप्रदायिक सद्भाव बनाये रखना एक बहुत बड़ी चुनौती है। गुलामी के दौर में अंग्रेजों ने अपना राज्य बनाये रखने और बढ़ाये जाने के लिए यहां की समरसता को भंग करने का षड्यंत्र रचा और उसमें वह काफी हद तक सफल भी हुए। और, आजादी के बाद के हमारे लोकतांत्रिक शासक भी अपनी सत्ता कायम रखने के लिए सांप्रदायिकता को हथियार बनाने से कभी नहीं चूकते हैं। इसमें भारत के संविधान में वर्णित धर्मनिरपेक्षता की भावना कैसे खंडित होती है, परस्पर विश्वास के सूत्र कैसे खण्डित होते हैं, इसका उन पर कोई असर नहीं पड़ता है।"[02]

2 परिकल्पना

लोकतंत्र के चतुर्थ स्तंभ के रूप में मीडिया का महिमागान सदियों से होता रहा है। "यकीनन मीडिया ने लोकतंत्र को बचाए रखने और काफी हद तक उसके सशक्तिकरण में अहम भूमिका निभाई है।, हालांकि, वैश्वीकरण के दौर में लोकतंत्र के हर स्तंभ की भूमिका परिवर्तित हुई है। और, मीडिया भी इससे अछूता नहीं है। कारपोरेट संस्कृति हावी हुई है, लोगों की सोच बदली है, व्यवहार बदला है।"[02] ऐसे प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध विषय ''सांप्रदायिकता में मीडिया की भूमिका (मुजफ्फरनगर के विशेष संदर्भ में) एक प्रकार से संदर्भित विषय के आलोक में मीडिया की समझ व व्यवहार का विवेचन एवं विश्लेषण है। इस लघु शोध प्रबंध के माध्यम से यह जांचने-परखने की कोशिश की गई है कि मीडिया ने मुजफ्फरनगर में हुए सांप्रदायिक दंगों का जिस प्रकार कवरेज किया, जिन मसलों को उत्तरदायी माना, क्या वे वाकई सही साबित हुए।

उल्लेखनीय है कि आजादी के बाद भी भारत में कई दंगे हुए, परन्तु लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ माना जाने वाला मीडिया प्राय: इसकी लगभग सही तस्वीर पेश करता रहा है। किन्तु, 2002 में गुजरात में हुए दंगे के समय सरकारी मशीनरी और पुलिस प्रशासन के साथ मुख्य गुजराती मीडिया भी दंगा को और भड़काने वाली ख़बरों को प्रकाशित करने लगे और पीड़ितों की सही तस्वीर पेश करने में भी पक्षपात किया। तभी से मीडिया को भी दंगों के समय से शक की नजर से देखा जाने लगा है। समकालीन भारत में सूचना क्रांति का तेजी से विस्तार हुआ है और आज देश के लगभग हर कोने तक इलेक्ट्रानिक मीडिया, सोशल मीडिया, और इन्टरनेट की पहुँच हो चुकी है। कोई अश्लील एम० एम० एस हो या कोई विवादित मुद्दा हो या सेक्स या क्राइम से जुड़ी कोई खबर हो इन्हें हम सरकारी निगाह से ही सही देखते जरुर हैं। मीडिया खासकर इलेक्ट्रानिक मीडिया भी ऐसी खबरों को मिर्च-मसाले के साथ परोसती है। ज्ञातव्य है कि ऐसी खबरें सोशल मीडिया पर भी बड़ी तेजी से वायरल होती हैं। "सोशल मीडिया अपनी बात को टेक्स्ट, आडियो, वीडियो और फोटो के जरिए लाखों लोगों तक पहुंचाने का पसंदीदा प्लेटफोर्म बनता जा रहा है। खासकर युवाओं के बीच युवाओं का स्वभाव होता है कि वे बहुत ही जल्द उग्र हो जाते हैं और उत्साहित भी, इसलिए उन्हें भड़काना ज्यादा आसान होता है। खासकर देश जाति और धर्म के नाम पर युवाशक्ति का भरपूर फायदा

सांप्रदायिकता फैलाने वाली ताकतें करती रहती हैं।"[04] उदाहरण के तौर पर अभी 2013 में उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर में दंगे की शुरुआत भी अधिकांश लोग सोशल मीडिया पर फैली अफवाह से मानते हैं। "परन्तु, दंगों के दौरान मीडिया (प्रिंट व इलेक्ट्रानिक) द्वारा भी मुजफ्फरनगर–शामली की सांप्रदायिक हिंसा की मजबूत जमीन तैयार की गयी। फिर अल्पसंख्यकों के सुनिश्चित संहार और बलात्कार की घटनाओं पर पर्दापोशी करने, भगवा बिग्रेट की हर कारगुजारी को सही बनाने, सांप्रदायिक नेताओं को हीरो बनाने, उत्पीड़ितों को अपराधी ठहराने और दोषियों के खिलाफ कार्यवाही की मांगो को उत्पीड़न साबित करने में हमारी मीडिया ने कोई कसर नहीं छोड़ी।"[05] हिंदी के प्रमुख अखबारों की ही नहीं, अपितु टेलीविजन समाचार चैनलों में दिखाए गए मुजफ्फरनगर-शामली, उत्तर प्रदेश के सांप्रदायिक दंगे संबंधी घटनाओं के संस्करण देखकर ऐसा सहज ही आभास होता है कि कॉर्पोरेट के हाथों संचालित और निष्पक्ष व लोकतंत्र का चौथा स्तंभ माने जाने वाले ये अखबार अगर ऐसी भूमिका अदा करते रहें तो आगे यानी कि भविष्य में सांप्रदायिक ताकतों को अब विशेष रण्नीति अपनाने की आवश्यकता नहीं होगी।

विवेचनार्थ, प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध विषय ''सांप्रदायिक दंगों में मीडिया की भूमिका'' निम्नलिखित परिकल्पनाओं पर आधारित है-

- क्या मीडिया द्वारा जो भी सांप्रदायिक दंगों से घटनाएं दिखाई जाती हैं, उस घटना के पीछे की सारी हकीकत मौजूद होती है?
- मीडिया में छपने वाली खबरों का जहां पर सांप्रदायिक घटना होती है, उस क्षेत्र के लोगों को किस प्रकार प्रभावित करती है?
- सांप्रदायिक हिंसा को नियंत्रित करने में मीडिया किस तरह की भूमिकाओं का निर्वहन करता है?

3. साहित्य पुनरावलोकन -

कोई भी नया शोध कार्य एक ऐसे भवन की तरह होता है जो पूर्व में किए हुए शोध कार्य की नींव पर निर्मित किया जाता है। जिस प्रकार भवन की मजबूती में नींव की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है, ठीक उसी प्रकार नए शोध रूपी भवन निर्माण कार्य में पूर्व में किए गए शोध कार्य एवं उपलब्ध साहित्य की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध के आलोक में कतिपय साहित्यों का अध्ययन एवं विश्लेषण काफी उपयोगी एवं सहायक साबित हुआ; यथा-

चंद्रा, विपिन. (2008) ने अपनी पुस्तक में सांप्रदायिकता का अर्थ, धर्म निरपेक्षता और सांप्रदायिकता की परिभाषा इत्यादि देते हुए बताया है कि सांप्रदायिकता मूलतः एक विचारधारा है।इस सांप्रदायिकता को पराजित करने और उसे जड़ से उखाड़ने के लिए लोगों के दिमाग से सांप्रदायिक विचारधारा को खत्म करना होगा तथा सांप्रदायिक विचारधारा के विरुद्ध गंभीर एवं निरंतर संघर्ष करना

होगा। क्योंकि, सांप्रदायिकता कोई स्थानीय या एक इलाके की समस्या नहीं है बल्कि धीरे-धीरे पूरे देश में बढ़ रही है। उन्होंने इस पुस्तक में सांप्रदायिकता और धर्मनिरपेक्षता को अलग-अलग माना है, क्योंकि भारत में अनेक धर्म बसते हैं और इसी से भारतीय धर्मनिरपेक्षता में मौलिक आयाम भी जुड़ते हैं।

सिन्हा, सच्चिदानंद. (2006) इन्होंने अपनी पुस्तक में अस्सी और नब्बे के दशक में देश में चल रही भारतीय राष्ट्रीयता और सांप्रदायिकता की चर्चा की हैं। राष्ट्रीय विध्वंशकारी गतिविधियां एवं सांप्रदायिकता को लेकर उस समय के प्रमुख समाचारपत्रों में प्रकाशित लेख का संकलन है। यह पुस्तक भारत की राष्ट्रीयता के स्वस्थ स्वरूप, उसकी विकृति व्याख्याएँ उस दिशा में अपेक्षित विवेक तथा सांप्रदायिकता के स्वरुप और चुनौती को समझने की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। राष्ट्र क्या है, नेशन स्टेट से उसका क्या अंतर और कैसा है, भारतीय राष्ट्र का सच्चा आधार और एकता की प्रेरक शक्ति क्या है, आर्थिक और राजनैतिक केंद्रीकरण के क्या-क्या भयंकर नतीजे हो सकते हैं, नयी हिंदूवादी राजनीति का वास्तविक धर्म से कैसा स्पष्ट और गहरा विरोध है, सांप्रदायिकता किस प्रकार एक नये राजनैतिक हथियार की तरह काम में लायी जा रही है आदि सब मुद्दों पर लेखक ने गहराई से विवेचन किया है। इतना ही नहीं, सांप्रदायिकता के संभावित और मौजूदा खतरों का स्वरुप विवेचित करने के साथ ही लेखक ने स्वस्थ सामाजिक प्रयासों तथा सांस्कृतिक, राजनैतिक पहल की दिशा के महत्त्वपूर्ण सूत्रों का भी उल्लेख किया है।

वरदराजन, सिद्धार्थ. (2005) ने अपनी इस पुस्तक में गुजरात दंगों से संबंधित विभिन्न आलेखों एवं संपादकीय को शामिल किया है। इसमें गुजरात (2002) हादसे से संबंधित अलग-अलग घटनाओं का अलग-अलग लेखको ने अपने लेख लिखे हैं। इस पुस्तक के माध्यम से गुजरात हादसे में किस प्रकार एक विशेष विचारधारा के लोगों द्वारा अल्पसंख्यक वर्ग का उत्पीड़न किया गया और इस उत्पीड़न में किस तरह से केवल सत्ताधारी दल के लोगों, नौकरशाही और पुलिस प्रशासन ही नहीं, बल्कि न्यापालिका का एक वर्ग भी शामिल था, इसका विस्तार से वर्णन किया गया है। इस पुसूतक में इस बात का सरलतापूर्वक उल्लेख किया गया है कि किस प्रकार गोधरा काण्ड जिसमें 58 लोगों की मृत्यु हो गयी तथा उसके बाद गुजरात में शुरू हुई सांप्रदायिकता की नंगी नाच जिसके अंतर्गत गुजरात के अधिकांश हिस्सों में हिंसा फैल गयी और अल्पसंख्यको को, विशेषकर मुसलमानों को इसका शिकार बनाया गया। इस हिंसा को किस प्रकार से शासन-प्रशासन का शह प्राप्त हुआ था, इसका विस्तार से विश्लेषण करते हुए इस बात का भी जिक्र किया गया है कि यह केवल तात्कालिक घटना का ही परिणाम नहीं था, बल्कि इसकी पृष्टभूमि पहले से तैयार की जा रही थी। उचित अवसर तलाशने के उपरांत प्रशासन ने कानून का दुरुपयोग करना शुरू किया। इस हिंसा से किस प्रकार महिलाओं, मुस्लिम युवकों का शोषण हुआ इसको भी लेखकों ने बखूबी दिखाया है। किस प्रकार पुलिस महकमे में मुस्लिम अफसरों को हाशिए पर रखा गया और मुस्लिम युवकों

को झूठे मुद्दों पर गैर-कानूनी तरीके से गिरफ्तार किया गया। इतना ही नहीं, किस प्रकार न्यायिक प्रक्रिया में इनके साथ नाइंसाफी हुई, संपादक ने इस पुस्तक के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया है कि भारत को सांप्रदायिक रूप से भयभीत गुजरात की तरह का समाज को बर्दाश्त नहीं करना चाहिए, जहां सत्ताधारी पार्टी और मुख्यधारा की गुजराती मीडिया लोगों के बीच नफरत फैलाने पर अमादा है और समाज का एक वर्ग अपने अधिकारों से वंचित कर दिया जाता है। इस इन्साफ और लोकतंत्र पसंद भारतीयों को गुजरात के सबक को याद रखना चाहिए इसे नजर अंदाज करना या भूलना पूरी तरह से घातक होगा।

बंधोपाध्याय, शैलेश कुमार. (2000) की यह पुस्तक दंगों का इतिहास पहले 1993 ई० में बंगला भाषा में प्रकाशित हुई थी। उसके बाद वर्ष 2000 में उन्होंने इसका हिंदी रूपांतरण प्रस्तुत किया। इस पुस्तक में दंगों की प्रथम शुरुआत अहमदाबाद एवं कश्मीर से लेकर उसके पूर्व मुगलकाल के समय के दंगों एवं 1857 के दंगों तथा 1857 के बाद के दंगे, जिसको अंग्रेजों द्वारा फूट डालो की नीति के तहत अब प्रयोग किया जाने लगा था, 1922 के खिलाफत आंदोलन एवं 1937 के बाद के दंगों तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के दंगों का विस्तृत विवरण मिलता है। लेखक ने अपनी पुस्तक में हिन्दुओं तथा मुसलमानों की धार्मिक विशिष्टताओं के साथ-साथ उनकी कमियों को भी बखूबी उजागर किया गया है। इस पुस्तक में 1857 के पहले और इसके बाद के दंगों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है जिसमें यह बताया गया है कि 1857 के बाद किस तरह से अंग्रेजों ने फूट-डालो और राज्य करो की नीति के तहत इतिहास की पुस्तकों में मुगल शासकों को हिन्दू का विध्वसंक, हिन्दुओं के ऊपर अत्याचार, इनके मंदिरों को तोड़ना, जजिया कर तथा उनका धर्मांतरण इत्यादि चीजों को बहुत ज्यादा चढ़ा-बढ़ा कर पेश किया गया, जिससे हिन्दू युवकों में मुसलमानों के प्रति एक प्रकार का असंतोष बढ़ा यानी कि इतिहास लेखन का विकेंद्रीकरण किया गया। किस तरह से अंग्रेजों की विनाशकारी नीति जो 1870 के प्रस्ताव के रूप में आयी और इसको आगे बढ़ाया, उसी के परिणामस्वरूप 1906 दिसंबर में ढाका में प्रथकता के नये जन्म के रूप में मुस्लिम लीग का उदय हुआ। फिर उसके बाद 1909 में मार्ले-मिंटो का पृथक निर्वाचन व्यवस्था और 1919 में चेम्सफोर्ड सुधार के नाम से किस तरह समाज में सांप्रदायिकता को बढ़ावा दिया गया जो बाद में भारत-पाकिस्तान विभाजन का कारण बना। इतना ही नहीं, इस पुस्तक में इस बात का भी वर्णन मिलता है कि आर्य समाज के प्रादुर्भाव के कारण 'गौ रक्षणी सभा' शुद्धि एवं 'संगठन' से मोपला विद्रोह के कारण जंगी हिन्दू आन्दोलन उत्पन्न हुआ था और उसके प्रतिक्रिया स्वरूप मुस्लिम तवलीक तथा तंजीम आन्दोलन भी जन्म कहीं-कहीं सांप्रदायिकता को बढ़ाने में सहायक रहा। स्वाधीनता के बाद के दंगे जो मुख्यतः कुछ राजनीतिक स्वार्थों के कारण प्रमुखता से हुए हैं और कुछ राजनीतिक पार्टियों द्वारा मुस्लिम समाज को केवल एक बैंक के रूप में देखा गया। लेखक ने अपनी इस पुस्तक में दंगो के पीछे अर्थनीति को भी बहुत अच्छी तरह से उजागर किया है कि कैसे यदि एक समाज उद्योग, व्यापार तथा अन्य क्षेत्रों में आगे बढ़ता है

तो दूसरे संप्रदाय द्वारा कैसे इसको खत्म करने के लिए सांप्रदायिकता का सहारा लिया जाता है। इसका उदाहरण हमें वर्ष 1947 के पूर्व बंगाल तथा पंजाब के देहातों में जितने दंगे हुए, उनके पीछे हिन्दू-जमीदारों तथा व्यापारी महाजनों एवं मुसलमान किसानों तथा कर्जदारों के बीच आर्थिक स्वार्थ का संघर्ष रहा है। 1947 के बाद 1990 में अलीगढ़, महाराष्ट्र के विवाड़ी में 1970-1989 तक के दंगे एवं खुर्जा का दंगा आदि इसके प्रमुख उदाहरण माने जा सकते हैं। और, सांप्रदायिक दंगों के अन्य कारण मानवीय सम्बन्ध जिसमें गैर संप्रदाय के पुरुष-स्त्री के बीच प्रेम, प्रशासन की असफलता, समाज विरोधियों की भूमिका, हथियारों की देन, अफवाह समाचार-पत्र आदि का सांप्रदायिक दंगों में क्या भूमिका होती है इसका बहुत ही विस्तृत विवरण व विश्लेषण इस पुस्तक में मिलता है।

इस्लाम, शम्सुल. (2006) ने अपनी इस बहुचर्चित पुस्तक में भारत के अलगाववाद और धर्म के अतीत का अध्ययन किया है, और वर्तमान से भी सम्बन्धित है और एक ऐसे मुद्दे (राष्ट्रवाद) पर और एक ऐसे संगठन (संघ) पर केंद्रित है जो प्राचीन विरासतों का दावा करता है। यह पुस्तक राष्ट्रवाद पर चले समूचे विमर्श की जांच-पड़ताल करती है। भारत में राष्ट्रवाद एक आदिकालीन सत्य था या विश्व में उभरती एक परिघटना हिस्से के तौर पर यहाँ पहुंचा, इस विवाद के सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों पहलुओं को ध्यान को रखते हुए निष्कर्ष पर हिन्दू राष्ट्रवाद के विकास के संदर्भ में किस तरह मिथक गढ़े जाते हैं और यथार्थ में परिवर्तित होते इसकी गहराई से पड़ताल की गई है। यह पुस्तक उन ऐतिहासिक स्थितियों का भी खुलासा करती हैं जिनमें एक नहीं कई प्रकार के राष्ट्रवाद की धाराएं, किस तरह कभी एक विशेष आधारित राष्ट्रवाद में उभरकर सामने आयीं, इस प्रक्रिया को इमानदारीपूर्वक समझने का प्रयत्न किया गया है।

इस पुस्तक में इस बात की खुल्लासा की गई है कि कैसे इस समय 1947 की स्थिति के समानांतर भारत की धर्मनिरपेक्ष जनतांत्रिक राजनीति के अस्तित्व के ऊपर एक गहरा खतरा मंडरा रहा है। अगर मुस्लिम लीग 1947 में द्विराष्ट्र सिद्धांत के संकीर्ण नजरिये के चलते एकताबद्ध भारत का सपना बिखर गया तो वर्तमान समय में कुछ सांप्रदायिक हिंदू संगठनों द्वारा उसी द्विराष्ट्र सिद्धांत की हिदायत और भारत को एक हिन्दू राष्ट्र में परिवर्तित करने पर अड़े रहने से धर्मनिरपेक्ष-जनतांत्रिक भारत भी बिखर सकता है। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का यह खतरा ज्यादा गंभीर है, क्योंकि मुस्लिम लीग के विपरीत जिसमें खुल्लम खुल्ला अपने सांप्रदायिक एजेंडे को रखा, यह साजिशाना ढ़ंग से धर्मनिरपेक्ष व जनतांत्रिक भारत को हिंदुत्व ब्रांड हिन्दू भारत में तब्दील करना चाहता है। मुख्य रूप से यह पुस्तक द्विराष्ट्र सिद्धांत के पीछे हुई तमाम सच्चाईयों को खोज निकालना चाहती है। मिलीजुली संस्कृति वाले देश भारत को जिन लोगों ने सन 1947 में खंडित किया उनमें से बहुत से लोगों और संगठनो के बारे में तो अच्छी खासी जानकारी है, लेकिन और भी की हैं जिनकी भूमिका पर पर्दा पड़ा है। आज भी इस देश में ऐसे तत्व मौजूद हैं जो नये नारों के साथ सन वर्ष 1947 को दोहराना चाहते हैं। वे द्विराष्ट्र सिद्धांत के आज भी बाहक हैं और एक बार भी

उसे क्रियान्वित करने में लगे हुए हैं। यह पुस्तक मुस्लिम अलगाववाद के साथ-साथ हिन्दू अलगाववाद पर एक गंभीर शोध का परिणाम है। इसलिए यह पुस्तक राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ पर केन्द्रित है, जिसकी हिंदुत्व शक्ति नये-नये अवतारों में लगातार जारी रहती है। लेखक के अनुसार हिंदुत्व वही दर्शन है जिसका धर्म-निरपेक्ष जनतांत्रिक भारत से पैदाइशी वैर है। यह पुस्तक हिंदुत्व के दर्शन तथा इसके विकास रिश्तों और उद्देश्यों की इसके अपने दस्तावेजों की रोशनी में गहराई से जांच-पड़ताल करती है। उदाहरण के लिए सन वर्ष 1923 में सावरकर द्वारा रचित 'हिंदुत्व' तथा सन 1939 में गोलवलकर द्वारा लिखित 'वी आर ऑवर नेशनहुड डिफाइंड (We Are Over Nationhood Defined) के मूल संस्करण जो कि अब उपलब्ध नहीं हैं, को मूल आधार मानते हुए लेखक ने अपना तार्किक विश्लेषण पेश किया है। लेखक ने संघ पर किए गए अध्ययनों को तीन श्रेणियों में बाँटा है:- पहली श्रेणी में ये रचनाएं शामिल हैं जो यह मानती है कि संघ हिन्दू राष्ट्रवादी उभार की स्वाभाविक और वैध अभिव्यक्ति है।

दूसरी श्रेणी की रचनाएं भारत के आदिम स्वरूप को भले दी हिंदू राष्ट्र मानती है, लेकिन वे संघ की अतिवादी हिन्दू विचारधारात्मक रुख की हिमायती नहीं है। संघ पर केन्द्रित सामग्री की तीसरी श्रेणी में ऐसी रचनाएं शामिल हैं जिन्होंने द्विराष्ट्र सिद्धांत और उस समूचे विमर्श में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की भूमिका तथा स्थान को लेकर धार्मिक राष्ट्रवाद की समग्र अवधारणा की आलोचनात्मक ढंग से पड़ताल की है।

सीताराम,येचुरी. (2006) ने अपनी इस बहुचर्चित पुस्तक में संकलित लेख विशेष रूप से बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद के दौर में और इसी बाधा पर प्रहार करने के प्रयत्न के हिस्से के तौर पर लिखे गए हैं। लेखक ने इस बात पर जोर दिया है कि भारत जैसे विविधता एवं विशाल तथा बहुत भारी विविधताओं वाले देश की एकता एवं अखंडता की रक्षा इस विविधता में एकता के सूत्रों को मजबूत करने के जरिये से ही की जा सकती है, न कि इस विविधता पर एकता थोपने के जरिए 'हिन्दू राष्ट्र' की विचारधारा जो सभी गैर हिन्दूओं को राष्ट्रीयता की अपनी परिभाषा से बाहर रखती है, भारत की विविधता पर भी ऐसी एकात्मकता परोसना चाहती है। हालांकि, भारत की बहुधार्मिक विविधता को भी पहचानने से इंकार करती है, उसे भारत की तमाम विविधताएं भी स्वीकार्य नहीं है। फिर भले ही यह भाषायी विविधता का मामला हो या क्षेत्रीय विविधता या फिर आदिवासी विविधता का ही मुदा क्यों न हो, इस प्रकार का रूख भारत की सभी को आत्मसात कर लेने वाली रुख के विपरीत है। परन्तु आर.एस.एस व भाजपा इस सच्चाई को स्वीकार ही नहीं करना चाहती जो कि उनके विचारधारात्मक आधार आज भारतीय जनता की आकांक्षाओं से बहुत दूर पड़ गए हैं जो देश की नयी ऊँचाइयों पर पहुँचा हुआ देखना चाहती है।

4. शोध की उपयोगिता एवं महत्त्व -

चूंकि, भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में मीडिया के अभिप्रेरक महत्व को नकारा नहीं जा सकता है, इसलिए सूचना क्रांति के इस युग में जहां एक ओर सामाजिक समरसता कायम करने में मीडिया की भूमिका काफी असरकारी मानी जा सकती है, वहीं दूसरी ओर सामाजिक व सांप्रदायिक विद्वेष फैलाने में भी मीडिया की भूमिका को कमतर करके नहीं आंका जा सकता है।

अस्तु, प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध विषय ''सांप्रदायिक दंगों में मीडिया की भूमिका'' की उपयोगिता एवं महत्त्व को निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत स्पष्ट किया जा सकता है, यथा-

- मीडिया द्वारा जो भी सांप्रदायिक दंगों से संबंधित घटनाएं दिखाई जाती हैं उस घटना के पीछे की वास्तविक सच्चाई का का अध्ययन करना।
- प्रिंट मीडिया में छपने वाली ख़बरों का जहां पर सांप्रदायिक घटनाएं होती हैं, उसके अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में लोगों पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन एवं विश्लेषण करना।
- वर्तमान समय में सांप्रदायिक हिंसा के बढ़ते कारणों का अध्ययन एवं विश्लेषण करना।
- सांप्रदायिक दंगों की प्रस्तुति में मीडिया अंतर्वस्तु का अध्ययन एवं विश्लेषण प्रस्तुत करना।
- समाज में व्याप्त सांप्रदायिकता को दूर करने में मीडिया की अपेक्षित भूमिकाओं का अध्ययन एवं विश्लेषण करना।

5. शोध प्रविधि एवं सीमाएं -

राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना से परिपूर्ण लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में जहां एक ओर मीडिया का अभूतपूर्व योगदान है, वहीं सूक्ष्म रूप से अवलोकन करने पर इसकी कुछ सीमाएं भी स्पष्ट हो जाती हैं। साथ ही एक लोकतांत्रिक देश में जनमाध्यमों की स्वतंत्रता अंतत: आम जनता व उसके व्यवहार पर न केवल निर्भर करती है, अपितु उससे अभिप्रेरित भी होती है। यही वजह है कि राष्ट्रीय एकता व अखंडता के निहितार्थ कभी-कभी सांप्रदायिक दंगों के दौरान जनमत अनियंत्रित मीडिया की भूमिका गौण व अलोकतांत्रिक हो जाती है।

चूंकि, उपयोगी व प्रभावी अनुसंधान के लिए संबंधित विषय के अनुरूप काल व क्षेत्र का निर्धारण तथा उसका परिसीमन एक अनिवार्य घटक है, इसलिए प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध विषय "सांप्रदायिक दंगों में मीडिया की भूमिका (मुजफ्फर नगर, उत्तर प्रदेश के विशेष संदर्भ में)" मुजफ्फर नगर के सांप्रदायिक दंगे के दौरान मीडिया की भूमिका तक परिसीमित किया गया है। विवेचनार्थ, प्रभावी एवं वैज्ञानिक तरीके से लघु शोध प्रबंध कार्य को पूरा करने हेतु निम्नलिखित शोध-प्रविधि व उपकरणों को अपनाया गया है; यथा-

- निदर्शन प्रणाली
- अंतर्वस्तु विश्लेषण
- प्रश्नावली / अनुसूची

अस्तु, प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध के आलोक में मुजफ्फरनगर जिला और उसके आस-पास के 10 गांवों का चुनाव किया जो मुजफ्फर नगर शहर से लगभग 40-50 किलोमीटर की परिधि में आते हैं। इन क्षेत्रों के 100 लोगों में से जिनमें कि 57 पुरूष और 43 महिलाएं भी थीं। पहले से तैयार अनुसूची के आधार पर उनका सर्वे किया गया है। यहां यह उल्लेखनीय है कि शोध प्रबंध के अनुरूप प्रश्नावली/अनुसूची तो कुल 250 लोगों के बीच वितरित की गई थी, लेकिन किन्हीं कारणों से 50 उत्तरदाताओं जिनमें अधिकांश पुरूष उत्तरदाताओं का समूह था, के आंकड़े प्राप्त नहीं हो सके हैं। वैसे विभिन्न माध्यमों की सहायता से उत्तरदाताओं में विभिन्न आयु समूह के लोगों को भी शामिल किया गया तथा उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति और उनकी शैक्षणिक योग्यताओं का भी उल्लेख प्रश्नावली में किया गया ताकि उत्तरदाताओं से प्राप्त आंकडों में किसी भी तरह से किसी प्रकार के भ्रम एवं पूर्वग्रह की कोई गुंजाइश न हो। इतना ही नहीं, व्यक्तिगत स्तर पर भी अवश्यकता के अनुरूप गांव-गांव में जाकर लोगों से सांप्रदायिक दंगे से संबंधित पूछताछ कर आंकड़े एकत्रित किए गए हैं।

6. शोध अभिकल्प -

विवेचनार्थ, प्राथमिक तथ्यों के संकलन में प्रश्नावली, अनुसूची और द्वितीयक तथ्यों के संकलन में आधारभूत पुस्तकें, ज़र्नल्स और प्रतिवेदन आदि स्रोत उल्लेखनीय हैं। तदोपरांत आंकड़ों का वर्गीकरण एवं सारणीयन कर सांख्यिकीय विधियों के अनुप्रयोग से उत्तरदाताओं के अभिमतों का परीक्षण और विश्लेषण किया गया है।

7. सैद्धांतिक रूपरेखा -

प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध विषय "सांप्रदायिकता दंगों में मीडिया की भूमिका (मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश के विशेष संदर्भ में)" के अनुरूप अंतर्वस्तु का बहुआयामी निर्धारण एवं प्रस्तुति के व्यावहारिक संबंध को सैद्धांतिक रूपरेखा में समझने की कोशिश की भी गई है, ताकि विषय की समग्रता का सहज व वास्तविक मूल्यांकन करने में किसी प्रकार के भ्रम की स्थिति पैदा न हो, संदेह की स्थिति पैदा न हो, क्योंकि, मनोवैज्ञानिकों की दृष्टि में सांप्रदायिकता एक प्रकार विकृत मानसिक अवस्था का परिणाम और कारण दोनों है।

8. चर एवं उनका मापन -

मीडिया समाज का दर्पण है। समाज पर मीडिया का बहुआयामी प्रभाव है। आज सामाजिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक परिवर्तन की जो लहर चली है, उसमें मीडिया की भूमिका काफी असरकारी है। चूंकि, किसी भी शोध कार्य में शामिल अलग-अलग चरों की व्याख्या एवं उनका मापन एक महत्त्वपूर्ण घटक होता है। इसलिए प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध ''सांप्रदायिकता में मीडिया की भूमिका (मुजफ्फरनगर के विशेष संदर्भ में)'' के अंतर्गत विषयगत प्रभावी अध्ययन व विश्लेषण हेतु इसके निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण बिंदुओं को शामिल किया गया है-

- उत्तरदाताओं का सामान्य परिचय : इसके अंतर्गत नाम, आयु, शिक्षा एवं क्षेत्र (पता) को शामिल किया गया है।
- उत्तरदाताओं की मीडिया अभिरूचि का अध्ययन: इसमें प्रिंट, इलेक्ट्रौनिक मीडिया सहित नवमीडिया यानी सोशल मीडिया के प्रति उत्तरदाताओं की अभिरूचि का अध्ययन एवं विश्लेषण किया गया है।
- व्यवसाय या रोजगार का प्रभाव: उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति को समझने के लिए उनके व्यवसाय या रोजगार का कॉलम भी प्रश्नावली/अनुसूची में सम्मिलित किया गया है।

विवेचनार्थ, इस प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों स्त्रोतों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक स्त्रोत के अंतर्गत अंतर्वस्तु विश्लेषण, अवलोकन प्रणाली, साक्षात्कार प्रणाली का अनुप्रयोग किया गया है। द्वितीयक स्त्रोत के अंतर्गत सरकारी प्रकाशित आंकड़े एवं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में उपलब्ध तत्संबंधी आंकड़ों व सूचनाओं का संग्रहण कर अध्ययन एवं विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्ष

भारत विविधताओं से भरा हुआ देश है। अपनी भौगोलिक विषमताओं व विविधताओं के साथ ही यह सामाजिक सांस्कृतिक रूप से भी अत्यंत विविधीकृत देश है। आमतौर पर यह अन्य किसी देश में इतनी विविधता देखने को नहीं मिलती। अत: यह अत्यंत स्वाभाविक है कि हमारे यहां अनेक धर्मावलंबी रहते हैं। प्रस्तुत लघुशोध प्रबंध 2013 में हुई मुजफ्फरनगर दंगों में मीडिया की भूमिका पर आधारित है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि धर्मनिरपेक्षता हमारी राष्ट्रीय एकता का अपरिहार्य तत्व है जिसको सरल, सुगम और सर्वस्वीकार्य बनाना हम सबका परम कर्त्तव्य है।

मीडिया का असली परिचय उसके अंतर्वस्तु से निर्धारित की जाती है। सांप्रदायिक दंगों के दौरान मीडिया रिपोर्टिंग प्राय: निष्पक्ष न होकर राजनीतिक रूप धारण कर लेती है, यह बेहद चिंता का विषय है। हालांकि, सांप्रदायिक दंगों के विशेषज्ञ यह भी स्वीकार करते हैं कि सांप्रदायिक दंगों के दौरान मीडिया के व्यवहार को तत्कालीन परिवेश से अत्यंत गहराई से प्रभावित करते हैं। लघुशोध प्रबंध के निमित्तकिए गए सर्वेक्षण के दौरान यह तथ्य खुलकर सामने आया कि सांप्रदायिक दंगों के दौरान सांप्रदायिक सद्भाव को कायम करने की बजाय सनसनी फैलाने में मीडिया की विशेष अभिरूचि होती है। ऐसे संवेदनशील समय में भी मीडिया में टी आर पी के पीछे भागने की आम प्रवृत्ति सहज ही अनुभूत है।

दरअसल किसी भी राष्ट्र का इतिहास उस राष्ट्र की थाती है। भारत जैसे विविधतामयी देश का इतिहास अत्यंत गौरवपूर्ण व समृद्धशाली है। मीडिया को यह तथ्य अंगीकार होना कि सांप्रदायिकता कोई वस्तु नहीं है, कोई व्यापार नहीं है, कोई योग्यता भी नहीं हैं। यह तो एक विकृत मानसिक अवस्था का परिचायक है जिसका मानवता व कल्याण से दूर-दूर तक कोई रिश्ता नहीं होता है। धर्मनिरपेक्ष भारत की सरलता, सहजता व समेकित दृष्टिकोण मूल पहचान और संस्कृति है। जियो और जिने दो हमारी मानवीय संस्कृति का मूल आधार है। आज आवश्यकता है मीडिया में शोध करके ऐसे अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्यों को उजागर करने की जो देशवासियों में भाईचारे एवं आपसी प्रेम व्यवहार को कायम रख सके तथा राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता के साथ-साथ मानवीय अस्मिता को संबल प्रदान कर सके। यह एक महान दायित्व है, मीडिया के विद्यार्थियों, शोधार्थियों, प्राध्यापकों, अन्य मीडियाकर्मियों तथा मीडिया में अभिरूचि रखने वाले अन्य प्रबुद्ध लोगों का। ऐसे में प्रस्तुत यह लघु शोध प्रबंध इस दिशा में मेरा एक लघु प्रयास है। क्योंकि, सांप्रदायिकता ही नहीं, बल्कि जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों में मीडिया के हस्तक्षेप से आज कोई अछूता नहीं है। यह हस्तक्षेप सार्थक होगा या विध्वसंक, यह मीडिया व समाज के अंत:संबधों पर निर्भर करेगा, यह सुनिश्चित है।

सन्दर्भ ग्रन्थसूची

- *इस्लाम, शम्सुल. (2006). भारत में अलगाववाद और धर्म. वाणी प्रकाशन: दरियागंज, नई दिल्ली.*
- *गुप्ता, रमणिका. (2004). सांप्रदायिकता के बदलते चेहरे. वाणी प्रकाशन: नई दिल्ली.*
- *चतुर्वेदी, जगदीश्वर. (2004). टेलीविजन संस्कृति और राजनीति. अनामिका पब्लिशर्स: नई दिल्ली.*
- *चन्द्रा, विपिन. (2008). सांप्रदायिकता एक प्रवेशिका. नेशनल बुक ट्रस्ट: वसंत कुंज, नई दिल्ली.*
- *जोशी, रामशरण. (2002). मीडिया और बाजारवाद. राधाकृष्ण प्रकाशन: नई दिल्ली.*
- *दयाल, प्रो. मनोज. (2010). मीडिया शोध. हरियाणा ग्रंथ अकादमी. पंचकूला: हरियाणा.*
- *धुलिया, सुभाष. (2001). सूचना क्रांति की राजनीति और विचारधारा. ग्रंथशिल्पी प्रकाशन: नई दिल्ली.*
- *परिहार, कालूराम. (2008). मीडिया के सामाजिक सरोकार. अनामिका पब्लिशर्स: नई दिल्ली.*
- *पचौरी, सुधीश. (2006). उत्तर आधुनिक मीडिया विमर्श. वाणी प्रकाशन: नई दिल्ली.*
- *मेहता, आलोक. (2003). पत्रकारिता की लक्ष्मण रेखा. सामायिक प्रकाशन: नई दिल्ली*
- *मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ. (2003). सामाजिक शोध व सांख्यिकी. विवेक प्रकाशन: दिल्ली.*
- *येचुरी, सीताराम. (2006). घृणा की राजनीति. वाणी प्रकाश: दरियागंज,नई दिल्ली.*
- *राय, विभूति नारायण. (2013). सांप्रदायिक दंगे और भारतीय पुलिस. राधाकृष्ण प्रकाशन: नई दिल्ली.*
- *वंद्योपाध्याय, शैलेश कुमार. (2000). दंगो का इतिहास. सर्व सेवा संघ प्रकाशन: वाराणसी.*
- *वरदराजन, सिद्धार्थ. (2005). गुजरात हादसे की हकीकत. वाणी प्रकाशन: दरियागंज, नई दिल्ली.*
- *सिन्हा, सच्चिच्चदानंद. (2006). भारतीय राष्ट्रीयता और साम्प्रदायिकता. मराल प्रकाशन: राहुल नगर, मुजफ्फरपुर.*
- *Ahmed, Hilal. (5 Oct 2013). Muzaffarnagar 2013. Economic and Political Weekly. Vol. 48, Issue No. 40.*

- *Mander, Harsh. Akhtar Chaudhary, Akram & Bose, Rajanya. (22 Oct 2016). Wages of Communal Violence in Muzaffarnagar and Shamli. Economic and Political Weekly. Vol. 51, Issue No. 43.*
- *Narayan, Badri. (13 Sep 2014). Communal Riots in Utter Pradesh. Economic and Political Weekly. Vol. 49, Issue No. 37.*
- *Singh, Jagpal. (30 July 2016). Communal Violence in Muzaffarnagar. Economic and Political Weekly. Vol. 51, Issue No. 31.*

सहायक पत्र-पत्रिकाएं

- *दैनिक हिंदुस्तान*
- *दैनिक जागरण*
- *दैनिक भास्कर*
- *जनसत्ता*
- *नवभारत टाइम्स*
- *राजस्थान पत्रिका*
- *नई दुनिया*
- *अमर उजाला*
- *दैनिक आज*
- *प्रभातखबर*
- *टाइम्स ऑफ इंडिया*
- *हिंदुस्तान टाइम्स*
- *इंडियन एक्सप्रेस*
- *द हिंदू*
- आजकल
- वसुधा